आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 4/अंक 1/मार्च 2024
Received: 11/03/2024; Accepted: 14/03/2024; Published: 24/03/2024

फीजी के गिरमिट विरासत का अनुशीलन

[1] डॉ. सुभाषिनी लता कुमार, [2]श्री खेंमेंद्रा कमल कुमार

[1]असिस्टंट प्रोफेसर,

[2]प्राध्यापक,

- फीजी नेशनल यूनिवर्सिटी

[1] डॉ. सुभाषिनी लता कुमार, [2]श्री खेंमेंद्रा कमल कुमार, **फीजी के गिरमिट विरासत का अनुशीलन** ,आखर हिंदी पत्रिका, खंड 4/अंक 1/मार्च 2024, (24-37)

[1] **डॉ. सुभाषिनी लता कुमार**, असिस्टंट प्रोफेसर, [2] **श्री खेंमेंद्रा कमल कुमार**, प्राध्यापक, फीजी नेशनल यूनिवर्सिटी

फीजी द्वीप में प्रवासी भारतीयों का इतिहास लगभग 144 वर्ष पुराना है। गर्व की बात यह है कि भारत के अलावा फीजी ही ऐसा देश है जहाँ हिंदी संसद की मान्यता प्राप्त भाषाओं में से एक है। फीजी और भारत के सांस्कृतिक संबंधों की नींव सन् में गिरमिटिया भारतीय श्रमिकों ने रखी जो गन्ने के खेतों और 1879 चीनी की मिलों में क ाम करने के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा यहाँ अनुबंध के तहत लाए गए थे। गिरमिट काल के दौरान फीजी ब्रिटिश सरकार के अधीन थी और औपनिवेशिक प्रभाव के कारण हिंदी की उपभाषाओं और बोलियों में अंग्रेजी, ईनाम से जाना ज 'फीजी हिंदी' तऊकई और देशज शब्दों का मिश्रण हुआ जिसे- फीजी हिंदी कहा जाता है। यहाँ की बोलचाल की भाषा बनी और जातपात-, धर्म, वर्ग के भेद भाव मिटाती हुई एकता-और प्रेम के सूत्र में गिरमिटियों को बाँधती है।

गिरमिट प्रथा

भारतीय पृथ्वी के लगभग हर कोने में पाए जाते हैं। न केवल भारतीयों ने अन्य महाद्वीपों की यात्रा की है, बल्कि उन्होंने प्रशांत क्षेत्र में छोटे द्वीप राज्य जैसे टोंगा, वनवातू, समोआ आदि में अपने परिवार सहित सदा के लिए बस गए। विजय मिश्रा इंडियन डायस्पोरा के बीच अंतर करते "न्यू" और "ओल्ड" हैं, जहाँ ओल्ड डायस्पोरा कुली व्यापार को संदर्भित है। प्रथम प्रवासी भारतवंशी वे हैं जो वीं सदी के पूर्वार्ध 19

तक कुली व्यापार के अंतर्गत यूरोपीय कॉलोनियों में गिरमिटिया मजदूर बनाकर गुयानादक्षिण ,त्रिनिडाड , मॉरीशस तथा फीजी आदि देशों में ले जाए गए। ,सूरीनाम ,अफ्रीकावहीं दूसरी कोटि में उन प्रवासी भारतीयों की गणना की जा सकती है जो स्वाधीन भारत से विकसित देशों जैसे अमरीका ,हॉलैंड ,इंग्लैड ,र्मनीज ,कनाडा , फ्रांस और खाड़ी देशों मे गए।

फीजी में गिरमिटियों से संबंधित चार मुख्य सूत्र हैं: कुटिल भर्ती, कालापानी पार करने की भयानक स्थिति, गिरमिटिया जीवन और कुली लाइन का रहनसहन-, तथा गिरमिट के बाद का संघर्ष। इस आलेख में फीजी द्वीप समूह में गिरमिटिया मजदूरों की भर्ती, उनके भारत से फीजी का सफर, गिरमिट प्रथा और हाशिये पर उनके जीवन का चित्रण प्रस्तुत है। यहाँ गि"रमिट या गिरमिटिया श्रम के "अनुबंध" अंग्रेजी के " का फीजी "समझौते"हिंदी संस्करण है।

मई महीना फीजियन कैलेंडर की समयावधि में दो विपरीत घटनाओं को रेखांकित करते हैं। 14 मई, 1987 को लेफ्टिनेंट कर्नल सीतीवेदी राबुका के नेतृत्व में पहला तख्तापलट हुआ, जिसके परिणाम स्वरूप फीजियन प्रधान मंत्री तिमोदी बावड्रा की चुनी हुई सरकार को उखाड़ फेंका गया। वहीं दूसरी ओर 14 मई 1879, फीजी में भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के आगमन का भी संकेत देता है। जहाँ 14 मई 1879 में साठ हजार से अधिक भारतीय गिरमिटिया मजदूरों के आगमन की ऐतिहासिक घटना है, तो वहीं 14 मई 1987 राजनैतिक तख्तापलट के कारण गिरमिटिया मजदूरों के हजारों वंशजों के पलायन के लिए उत्प्रेरक था। हम आभारी हैं अपने पूर्वजों के कि उन्होंने भारत छोड़ने के समय से अब तक बहुत कुछ बलिदान किया और फीजी में रहने के लिए संघर्ष किया। 14 मई, एक ऐतिहासिक दिन है जब फीजी के भारतीयों को उनके पूर्वाभासों के लिए सम्मानित किया जाता हैं।

भारत और भारतीयों की कई छवियों को यूरोपीय अन्वेषणकों ने चित्रित किया है। इन चित्रों में भारतीयों को फकीरों या धार्मिक प्रतिबंधों द्वारा अपनी मिट्टी से बंधे गरीब मजदूरों के रूप में चित्रित किया गया हैं। सन् 1800 में इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति की शुरुआत हुई। ऐसे में ब्रिटेन ने एशिया, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, फीजी आदि देशों में उपनिवेशवाद की शुरुआत की। इन देशों के लिए एक बड़ी संख्या में मज़दूरों की ज़रूरत महसूस की गई। इस ज़रूरत को पूरा करने के लिए ब्रिटिश शासक भारत से मेहनती, सस्ते, ईमानदार श्रमिकों को ले जाते थे। बाद में, इन्हीं श्रमिकों को 'गिरमिटिया मज़दूर' कहा जाने लगा।

फीजी के द्वीपों को पहली बार सन्से 330 में एबेल टेस्मान ने देखा था। इस समूह में 1643 त हैं। यहाँ की जन समुदाय दो मुख्य द्वीपों में फैली अधिक द्वीप शामिल हैं जो प्रशांत महासागर के केंद्र में स्थि तउकइ निवासित है-हुई हैं जिनका नाम विती लेवु और वानुवा लेवु है। छोटे द्वीपों पर मुख्य रूप से ईं। आज फीजी प्रवासी भारतीयों के अतिरिक्त चीनी, तुवालुअन तथा अन्य प्रशांत द्वीप समूह से आए लोगों व मूल ई-जियन का घर है। यह अपनी बहुसांस्कृतिक मिश्रण के लिए जाना जाता है। फीजी में सबसे अधिक तउकइ फी बोली जाने वाली भाषा अंग्रेजी है। अंग्रेजी औपनिवेशिक विरासत से पाई गई प्रशासन की भाषा है। सन् 2013

के संविधान में अंग्रेजी, फीजियन और हिंदी भाषा देश की प्रमुख भाषाओं के रूप में सन्निहित है। तीन भाषाओं के बीच के परस्पर प्रक्रिया को सामाजिक स्थानों और सभाओं में आसानी से देखा जा सकता है।

उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में आरम्भ की गईगिरमिट एक ऐसी प्रथा थी जो , करती थी। भारतीय बेरोजगार मजदूरों को रोज़ी की तलाश थी विदेश में काम करने के लिए मज़दूरों को भर्ती, और इसलिए वे एग्रीमेंट पर काम करने के लिए तैयार हो जाते थे। इनमें से ज्यादातर मज़दूर अनपढ़ और असंगठित होते थे और इसलिए न्याय के विचार से शून्य वे आरकाटियों की बातों में फसकर कागज पर अंगूठे का निशान लगा देते थे। ऐसे में अंग्रेज चालाक उन्हें एग्रीमेंट पर काम दिलवाने के बहाने अपने देश से दूर अनजान देशों में ले जाते थे। इस प्रथा के अंतर्गत भारतीय मज़दूरों से खेतों पर एक निर्धारित समय तक :प्राय) पाँच से दस सालमजदूर आम बोलचाल की काम करने के लिए एक अनुबन्ध कराया जाता था। जिसे (भाषा में 'गिरमिट प्रथा' कहने लगे। गिरमिट शब्द अंग्रेजी के 'एग्रीमेंट' शब्द का अपभ्रंश बताया जाता है और इस अनुबन्ध के अंतर्गत काम करने वाले लोग 'गिरमिटिया' कहलाए।

ऐतिहासिक दृष्टि से फीजी में भारतीयों का आगमन सन् 1879 में भारत के बिहारउत्तर , और दक्षिण प्रदेशों से पहुँचे गिरमिटिया श्रमिकों द्वारा हुआ। आज फीजी की उन्नति और समृद्धि इन ,प्रदेश भारतीयों के श्रम और संघर्ष का ही प्रमाण है। गिरमिटिया मजदूरों के अनुबंध के अनुसार उन्हें एक निर्दिष्ट अवधि के समय के लिए निश्चितलिए फीजी में काम करना पड़ता है। 5 साल के एग्रीमेंट के बाद, वे अपने खर्च पर भारत लौटने के लिए स्वतंत्र थे। औपनिवेशिक सरकार 10साल के एग्रीमेंट के बाद हर गिरमिटिया और उनके बच्चों को भारत वापस भेजने के लिए तैयार थी। गिरमिट से मुक्त होने पर मज़दूरों को छूट रहती थी कि वे या तो भारत लौट जाए या स्वतंत्र मजदूर की हैसियत से वहीं उपनिवेश में बस जाए। यदि वह साल बाद 10 स्वदेश लौटना चाहता तो उसे और उनके बच्चों को वापसी का किराया दिया जाता था। हालांकि गिरमिट की यह सामान्य प्रथा कहींभी प्रचल कहीं पर कुछ परिवर्तित रूप में-ित थी।

इस अनुबंध से गिरमिटिये छूट तो सकते थे, लेकिन उनके पास स्वदेश लौटने के पैसे नहीं थे। उनके पास इसके अलावा और कोई चारा नहीं होता था कि वहीं रहकर या तो अपने मालिक के पास काम करें या किसी अन्य मालिक के नीचे मजदूरी करें। एग्रीमेंट के चक्कर तथा दूरी के कारण ये घर भी वापस नहीं आ पाते थे। हर किसी को अपनी आजादी प्यारी होती है, फिर चाहे वह इंसान हो या फिर पशुपक्षी।- उनका जीवन जेलों में वर्षों से बंद कैदियों के भाँति होता था जो अनुबन्ध से आज़ादी के लिए तड़पते रहते। ये सिलसिला कई सालों तक चलता रहा। फिर भारत की इमपिरियल लेजिस्लेटिव कॉन्सिल के प्रस्ताव के पर में 1916 मार्च 20 गिरमिट प्रथा का अंत हो गया और भारतीयों ने स्वतंत्रता की सांस ली।

गिरमिटियों के तीसरे पीढ़ी के वंशज श्री खेमेंद्र कुमार 'पिंजरा' कविता में अपने पूर्वजों की संवेदनाएं इन पंक्तियों में अभिव्यक्त करते हैं-

एक छोटी सी पोठली
एक मीठा सा सपना
लेकर झगरू चला
सात समुद्र पार
बारह हजार मील दूर
जब आँख खुली
तो पाया रमणीक द्वीप
साहब का कटीला चाबुक
और भूत लैन में
एक अंधेरा कमरा
रोया भागा ,गाया,
बहुत चिल्लाया
अपने को कोसा
लेकिन तोड़ न पाया
वो समुद्री पिंजरा...(कुमार 47) [1]

भारत और फीजी के बीच की दूरी लगभग बारह हजार मील है। कई साहित्यिक ग्रंथों ने इस बात को रेखांकित किया कि जहाजों पर यात्रा के दौरान भारतीय मजदूरों के साथ बुरा उपचार हुआ। जहाज द्वारा भारत से फीजी की यात्रा के लिए नौकायन जहाजों को तिहत्तर दिन का समय लगता था, जबकि स्टीमर 30 दिन में पहुँच जाती थी। पं. तोतोराम सनाढ्य के लिए भी कालापानी पार करने के ये तीन महीने और बारह दिन एक सरासर अपराध के अलावा और कुछ नहीं था। 'फिजीद्वीप में मेरे 21 वर्ष' में पं तोतोराम सनाढ्य जहाज पर अपने अनुभव के विषय में लिखते हैं -"हम लोगों में से प्रत्येक को डेढ़ फुट चौड़ी और छह फुट लंबी जगह दी गयी। कई लोगों ने शिकायत की कि इतने स्थान में हम नहीं रह सकते, तो गोरे डाक्टर ने ललकार कर कहा 'साला टुम को रहना होगा'। जब हम लोग बैठ चुके तो हर एक को चारआधी -चार बिस्कुट और आधी-छटांक चीनी दी गयी। इन बिस्कुटों कों गोरे लोगडॉग बिस्कुट कहते हैं और ये कुत्तों को खिलाये जाते हैं।"[2]

इसके अतिरिक्त सभी जाति वर्ग का एक साथ खाना, एक ही कंटेनर से पानी पीना, वस्तुओं का साझा और शौचालय को साफसफाई-, आदि कठिन परिस्थितियाँ रही। इन भारतीयों को कुली का दर्जा दिया गया। काला पानी की यात्रा ने जाति व्यवस्था को भंग कर दिया और हिंदुओं, मुस्लिमों, और ईसाईयों को एक नए रिश्ते को आत्मसात करने के लिए मजबूर किया, जिसे " जहाजी भाई " कहा गया, जो भाईबहन के-रिश्ते को दर्शाता है। अपनों से दूर होने के गम में ये मजदूर इतने टूट जाते थेकि कई दिनों तक अपने गाँव , परेशानियों को झेलते हुए संबंधियों के लिए रोते बिलखते मानसिक तनाव से घिरे रहते थे। इन-संगे ,परिवार

गिरमिटिये अपने प्रवास को'काला पानी' कहते थे। यह काला पानी का सफर ही था जिसने पारिवारिक संपर्क, पुराने तरीके, जाति और नए लोगों को एक सामान्य संबंध में जोड़ दिया था। यह वह संबंध है जिसने तत्काल पश्चात अवधि में प्रवासियों के बीच सामाजिक संपर्क, आर्थिक सहयोग और भावनात्मक समर्थन का आधार बनाया।

उनकी विवशता त्रासदीनिर्वासन की पीड़ा उनके गीतों और बिरहा में बोलती है। फी ,जी के बिदेसिया लोकगीत में भी 'काला पानी' का उल्लेख मिलता है। कवयित्री श्रीमती अमरजीत कौर बिदेसिया गीत के माध्यम से गिरमिटिया नारियों की व्यथा प्रस्तुत करती हैं-

फिरंगिया के राजुआ मा छूटा मोरा देसुआ हो
गोरी सरकार चली चाल रे बिदेसिया...
पाल के जहाजुआ मा रोयधोय बैठी हो-
कैसे होय काला पानी पार रे बिदेसिया
जी अरा डराए घाट क्यों नहीं आए हो
बीते दिन कई भये मास रे बिदेसिया ...[3]

तीन मास के लम्बे समुद्री यात्रा के दौरान कुछ मजदूर समुद्री बीमारी ,पेचिश ,हैजा , बड़ी माता जैसी बीमारियों से पीड़ित हो जाते थे जिनका इलाज जहाज पर करना मुश्किल था। सही समय पर इलाज न होने के कारण उनकी मृत्यु भी हो जाती थी। तब उनके शव को समुद्र में ही फेंक दिया जाता था।

गिरमिटिया श्रमिकों की भर्ती

गिरमिटिया श्रमिकों की भरती में आरकाटियों का हाथ था। आरकाटी औपनिवेशिक उत्प्रवास एजेंट द्वारा नियुक्त किए गए वे स्थानीय पुरुष, लड़के व महिलाएं थीं जो अवैध रूप से श्रमिकों की भर्ती में लगे हुए थे । ये आरकाटी खुद को कभी एक पुल या पानी वाले स्थान के पास, कस्बों और शहरों के बाहर सड़क के किनारे पर तैनात रहते थे, या फिर बाज़ारों, मंदिरों और मेलों में हालात के मारे लोगों की प्रतीक्षा करते थे। ज्यादातर वे हालात के मारे भोलेभाले ग्रामीणों को निशाना बनाते और उन्हें प्रवास में - -मजदूरी करने का सुनहरा सपना दिखाते"ऐसा काम मिलेगा जो आपके दिल को खुश कर देगा, आपको कभी भी किसी भी प्रकार के दुखों को नहीं झेलना पड़ेगा, कभी भी किसी भी प्रकार की समस्या नहीं होगी।" इस प्रकार आराकाटी भोलेजिसके लिए उन्हें कमीशन मिलता ,भाले ग्रामीणों को बहका कर डेपों के अंदर ले जाते थे- भाले भारतीय आरकाटियों की बातों में आ जाते और अपने -था। अच्छे वेतन और सुखी जीवन की चाह में भोले य मजदूर शर्तबंदी प्रथा को कानूनी रूप से देश तथा परिवार को छोड़ने के लिए तैयार हो जाते। जब भारती

स्वीकार कर लेते तब आरकाटी उन्हें कलकत्ता या मद्रास भेज देते थे क्योंकि इन्हीं दो बन्दरगाहों से गिरमिटियों कोजहाजों पर चढ़ाया जाता था।

गिरमिटिया श्रमिकों की भर्ती पर पंडित तोताराम सनाढ्य अपनी पुस्तक 'फीजी द्वीप में मेरे इक्कीस वर्ष' में लिखते हैं-"वह आरकाटी हम सब को मजिस्ट्रेट के पास ले जाने की तैयारियाँ करने लगा। कुल 165 स्त्रीपुरुष थे। सब गाड़ियों में बंद किए गए और कोई आध घंटे में हम लोग कचहरी पहुँचे। उस आरकाटी ने - कह रखा था कि साहब जब तुम लोगों से कोई बात पूछे तो हम लोगों से पहले ही'हाँ' कहना, अगर तुमने नाहीं कर दी तो बस तुम पर नालिश कर दी जाएगी और तुम्हें जेल काटनी पड़ेगी। सब लोग एकएक करके मजिस्ट्रेट - के सामने लाये गए। वह प्रत्येक से पूछता था, 'कहो तुम फिजी जाने को राजी हो?' मजिस्ट्रेट यह नहीं बताता था कि फिजी कहाँ है, वहाँ क्या काम करना पड़ेगा तथा काम न करने पर क्या दंड दिया जाएगा।"[4] सन्नाढ्य की कथा यह दर्शाती है कि भारतीयों को फीजी में काम करने के लिए कैसे भर्ती किया गया था। अपनी किताब 'फीजी द्वीप में मेरे इक्कीस वर्ष' में कई उदाहरणों में सन्नाढ्य ने बहकाना शब्द का प्रयोग किया है। सनाढ्य को इस बात का अधिक दुख हुआ कि आरकाटी ने अंतर्निहित वास्तविकता और आने वाले अन्यायपूर्ण सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या नहीं की और अपने नीजि स्वार्थ के लिए लोगों को धोके में रखा।

पाँच लंबे वर्षों और समुद्री यात्रा को ध्यान में रखते हुए पं. तोताराम सनाढ्य ने अन्यथा निर्णय लिया। जब अनुबंध की शर्तें सुन उन्होंने जाने से मना किया तब उसे दूर एक कमरे में बंद कर दिया गया। उसे बिना भोजन और पानी के रखा गया जब तक कि वह फीजी जाने के लिए सहमत नहीं हुआ। उसे दोबारा इस्तेमाल की गई प्लेटों में खाना खाने को दिया गया और उसी झूठे कप में पानी पीने के लिए मजबूर किया गया और विरोध करने पर पीटा भी गया। इस तरह एक ब्राह्मण जाति का शोषण शुरु हुआ और मजदूरों को फीजी ले जाने के लिए तैयार किया गया।

इस विषय पर विचार करते हुए, प्रोलाल ने फीजी के गिरमिटिया श्रमिकों के सामाजिक . मूल पर इतिहास की खोज करते हुए भर्ती प्रक्रिया कीजांच भी की जिसमें कुछ हद तक वे सनाढ्य की व्याख्या से सहमत हैं। प्रोर धोखाधड़ी पर आधारित थाकभी धोखे औ-लाल ने निष्कर्ष निकाला कि प्रलोभन कभी., लेकिन इसकी सीमा अतिरंजित थी। एक निबंध बहर्राइच की वापसी' में लाल बताते हैं कि एक युवा अविवाहित व्यक्ति के रूप में उनके दादा कैसे और क्यों, नौकरी की तलाश में फीजी पहँचे थे। सन् 1907-1908 में बहर्राइच एक निर्धन सूखाग्रस्त जिला था, जिसके कारण यहाँ लगातार खराब फसलें आ रही थीं। उनके दादाजी स्थानीय जिल्लों में काम की तलाश में भटक रहे थे जहाँ उन्होंने एक टापू में अद्‌भुत अवसरों के बारे में सुना और तुरंत काम के लिए तैयार हो गए। जिसके बाद उन्हें को पंजीकरण के लिए 1908 जनवरी 13 गया। प्रशासनिक प्रोटोकॉल की पूर्ति के साथ सभी आवश्यक शारीरिक और मानसिक जांचों फैजाबाद ले जाया के बाद, उनके दादा को 'एसएस सांगोला' जहाज पर फीजी यात्रा के लिए प्रमाणित किया गया था।[5] उनके दादा

के उपाख्यान के आधार पर हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि कई ऐसे श्रमिक थे जो अपनी पसंद और स्वतंत्र इच्छा से फीजी आए थे।

प्रसिद्ध मिशनरी श्री जे डब्ल्यू बर्टन ने अपनी पुस्तक.'द फीजी ऑफ़ टूडे-') 1910में (भारतीय गिरमिटियों को"निम्न या जाति हीन, शहरों की सड़कों पर झाड़ूपोछा करने वाले-, भारत में कानून से बचने वाले और भोले ग्रामीण" के रूप में वर्गीकृत किया है।" इस संदर्भ में केगिलियन ने अपनी डॉक्टरेट .एल. थीसिस'ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन इमिग्रेशन एंड सेटलमेंट इन फीजी' में बर्टन के समानांतर दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। गिलियन लिखते हैं कि: ... *most recruits were poverty-stricken, desperate men, underage boys, women separated from their families or kidnapped, and others wanted by police. Many had no idea where Fiji was. To them, Fiji was a district near Calcutta. Majority of them left their homes for reasons including family quarrels, the desire for adventure, to escape responsibility and burdensome social restrictions. Some were even deviants, loafers, vagrants, and misfits. Women to men ratio were 40 is to 100 men. The arkatis targeted widows, runaway or destitute wives, girls who have left their house under a cloud, and girls who formed part of an emigrating family. The recruiters gave false names, addresses, or caste, or declared men and women to be husband and wife (depot marriage) to avoid enquiries.*[6]

फीजी में गिरमिटियों का आगमन

सन् 1874 में फीजी को ब्रिटिश कॉलोनी बनने के बाद इंडेंटचर सिस्टम का आरंभ हुआ। कॉलोनी के प्रशासन के बारे में ब्रिटिश साम्राज्य का रुख स्पष्ट था कि प्रत्येक कॉलोनी को अपना राजस्व उत्पन्न करने के साथ अपने संसाधनों का प्रबंध भी करना था। इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि एक संपन्न और स्थायी अर्थव्यवस्था स्थापित करने के लिएके पीछे (गिरमिट प्रथा) इस औपनिवेशिक परियोजना , तत्कालीन फीजी के गवर्नर सर आर्थर गॉर्डन का अत्यधिक दबाव था।[7] तथा उन्होंने यह भी कोशिश की कि मूल फीजियन समाज को बाधित किए बिना ही कॉलोनी के सीमित व्यावसायिक विकास से राजस्व प्राप्त किया जाए।

गवर्नर सर आर्थर गॉर्डन ने फीजी के सीमित व्यावसाय को विकसित करने के लिए एक

ऑस्ट्रेलियाई उद्यम औपनिवेशिक शुगर रिफाइनिंग कंपनी आर.एस.को आमंत्रित किया। सी (आर.एस.सी) के साथ योजनाएं सुनिश्चित होने के बाद, उन्होंने कंपनी के लिए सस्ते और प्रचुर मात्रा में श्रमिकों के मुद्दे को उठाया। प्रो. ब्रिजलाल के अनुसार, गॉर्डन को त्रिनिडाड और मॉरीशस में भारतीय गिरमिटिया प्रणाली का अनुभव था इसलिए उन्होंने भारत से श्रमिकों को लाने का विचार किया। गॉर्डन की 'मानवीय उद्यम' चार स्तंभों पर आश्रित था फीजी :का आर्थिक विकास, गरीब भारतीयों की आर्थिक उन्नति, फीजियनों और यूरोपियन उपनिवेशकों के बीच आदेश का पालन, और मूल फीजियनों के सामाजिक संरचना और रीतिरिवाजों का - संरक्षण।

ब्रिटिश साम्राज्य और भारत की औपनिवेशिक सरकार को आश्वस्त करने के बाद, पांच साल के इंडेंटचर समझौते पर भारतीय गिरमिटिया श्रमिकों का पहला जत्था मई 14, को लियोनिदास नामक 1879 जहाज में फीजी पहुंचा। 17 मई ,1879 को 'द फीजी टाइम्स' समाचार पत्र ने रिपोर्ट छापी थी कि लियोनिदास जहाज बुधवार,मई को लेवूका बंदरगाह के पास भारतीय मजदूरो 14 ं को लेकर पहुँच गया है। किंतु, जहाज में कई यात्री बीमारी से पीड़ित थे इसलिए यात्रियों को द्वीप पर नहीं उतारा जा सका। जब समस्त यात्री बीमारियों से बाहर आए तब ,अगस्त 91879 को उन्हें यनूदालाईलाई द्वीप पर से वीतिलेवू के पास के नुकूलाऊ द्वीप पर ले जाया गया।[8] नुकूलाऊ द्वीप पर सीआर कंपनी ने एक डेपो बनाया था जहाँ गिरमिटिया .एस . यात्रियों को उतारा जाता था। पं. तोताराम सनाढ्य ने भी अपनी पुस्तक में नुकूलाऊ द्वीप पर बने इस डेपो की व्याखया की है। यही से मजदूरों को विभिन्न एस्टेटों में जाने के लिए विभक्त किया जाता था।

कुल 60,965 यात्री भारत से फीजी के लिए रवाना हुए लेकिन 60,553 यात्री फीजी पहुंचे। आरंभिक दौर में जहाज केवल कलकत्ता से मजदूरों को लाता था, लेकिन 1903 से दो जहाजों को छोड़कर सभी जहाज मद्रास से ही मजदूरों को लाने लगे। कलकत्ता से कुल 45,439 गिरमिटिया मजदूर और मद्रास से 15,114 गिरमिटिया मजदूर फीजी आए। फीजी में बसे अधिकांश भारतीय इन्हीं निर्वासित गिरमिटियों के प्रत्यक्ष वंशज हैं। आखरी जहाज 'सुतलज' 11 नवेम्बर, 1916 को मजदूरों के साथ फीजी पहुँचा। 888इस प्रकार की यात्राओं के जरिये से गिरमिटिया मजदूर फीजी पहुँचे। इनमें से एक जहाज 87'सीरिया' समुद्री दुर्घटना का शिकार भी हुई। यह जहाज फीजी में आकर तट से केवल चार मील की दूरी पर घिरी नसीली रीफ से टकरा गई थी। इस घातक यात्रा पर सीरिया यात 497 को 1884 मार्च 13्रियों को लेकर कलकत्ता से निकला था। अफसोस की बात है कि रविवार लोगों की जान चली गई। 59 को इस दुर्घटना में 1884 मई 11 फीजी के इतिहास के पन्नों में यह सबसे खराब समुद्री आपदा थी।

जब महात्मा गांधी प्रवासी भारतीयों की सहायता करने के लिए दक्षिण अफ्रिका गए, तब उन्होंने वहाँ के लोगों को उनके अधिकार दिलाने के लिए अहिंसक संघर्ष किया । गांधी ने वहाँ से इन्डियन

ओपीनियन नामक साप्ताहिक पत्र द्वारा गिरमिटिया मजदूरों के संघर्षमय जीवन को दुनिया के सामने प्रस्तुत किया । गांधी जी ने मॉरिशस पहुँचकर वहाँ के भारतवंशियों को अपने अधिकार और भाषा के महत्व को समझाया । इसके बाद सन् में बनारसीदास चतुर्वेदी 1916, भवानी दयाल संन्यासी, पंतोताराम सनाढ्य आदि . के प्रयास से गिरमिट प्रथा का अंत हुआ। अब मॉरिशस, फीजी, सूरीनाम आदि देशों के मूल भारतीय लोग 'पीपुल ऑफ इन्डियन ओरिजिन' नाम से जाना जाता है।

पहले पाँच साल के अनुबंध के बाद, गिरमिटिया श्रमिकों के पास अपने स्वयं के खर्च पर भारत लौटने का विकल्प था, या यदि वे एक नए अनुबंध पर हस्ताक्षर करते और दूसरे अनुबंध के पांच साल पूरे कर लेते थे तब वे कॉलोनी के खर्च पर वापस जा सकते थे। कुछ गिरमिटिया मजदूर पांच साल बाद लौटे मगर कई 10 साल के बाद मुक्त मार्ग से लौटने के लिए निर्भर थे। लेकिन ज्यादातर मजदूरों ने स्थायी रूप से फीजी में रहने के लिए चुना। इतने परिश्रम और संघर्ष के बावजूद इन मज़दूरों ने तनमन से- फीजी देश को अपना बसेरा बनाया ।

गिरमिटिया जीवन और कुली लाइन

भारतीय श्रमिकों के लिए अपना स्वदेश छोड़कर सात समुद्र पार करना एक कठिन कार्य था, तो कुली लाइनों का जीवन उससे भी निरंकुश और बत्तर था। हालांकि, भारत की तुलना में प्रवासियों की अधिक कमाई हो रही थी, लेकिन भारत में वे जो काम करते थे, उस पर बगान का जीवन बहुत कठिन सिद्ध हुआ। इन श्रमिकों का दिन सुबह लगभग 4 बजे शुरू होता था। सुबह बजे तक खाना बनाने 5, खाने के बाद वे मैदान में उतर जाते थे जहाँ उन्हें उस दिन का निर्धारित कार्य सोप (टास्क)ा जाता था। पुरुषों के साथ-साथ स्त्रियाँ भी अपने छोटेछोटे बच्चों के साथ काम करने जाती थी। इन कार्य में नालियों को खोदना या साफ करना-, छंटाई, कटाई और गन्ना भरना शामिल था। काम इतना ज्यादा होता कि ज्यादातर श्रमिक समय पर दिए गए कार्य को पूरा नहीं कर पाते थे। उन्हें प्रतिदिन घंटों काम करना पड़ता और काम न करने पर प्रताड़ित भी किए जाते थे।

प्रत्येक व्यक्ति को भर -फुट चौड़ी खेतों में दिन 6 फुट लंबी और 1300 फुट से लेकर 1200 ए दी जाती थी। इस कठिन काम के लिए उसफाई के लि-कटाई व साफ ,बोने ,कुदाली चलानेन्हें कम वेतन भी दिया जाता था। फीजी के गिरमिटिया मजदूर पं तोताराम सनाढ्य अपने संस्मरण .'फीजी में मेरे वर्ष 21' में लिखते हैं -"हम लोगों को वहाँ प्रति सप्ताह 5 शिलिंग 6 पैंस मिलते हैं, सो भी तब, जब पूरा काम करें। और सौ आदमियों में 5 से अधिक पूरा काम कभी भी नहीं कर सकते।"[९] इन कठिन परिस्थितियों से गिरमिटिया मजदूरों को गुजरना पड़ता था। गिरमिटियों को केवल जीवित रहने लायक भोजन, वस्त्रादि दिए जाते थे। इन्हें शिक्षा,

मनोरंजन आदि मूलभूत ज़रूरतों से वंचित रखा जाता था। मालिकों के बुरे व्यवहार के कारण मजदूर अकाल मौत का शिकार भी हो जाते थे। ऐसा कष्टों से भरा जीवन इन श्रमिकों को सहना पड़ा जिसे वे 'नरक' की संज्ञा देते हैं।[10] अधिक काम करना श्रमिकों की एक आम शिकायत थी। कम संसाधनों और काम पूरा न होने के कारण मारपीट और पिटाई की खबरें भी आम बात थीं [11] गिलियन) 305-325)।

'सवेरा' जोगिन्द्र सिंह कंवल का पहला उपन्यास है जिसमें उन्होंने भारत से फीजी आए भारतीयों की परिस्थितियाँ, फीजी लाने में झूठकपट-, बईमानी, अंग्रेज़ कोलम्बरों की करतूतों का उल्लेख किया गया है। इसमें निरीह भारतीय मजदूरों के साथ अमानवीय पशुओं जैसे बर्ताव का मार्मिक वर्णन है। उपन्यास की कथावस्तु सन् से शु 1879रु होती है और सन् में गिरमिट प्रथा के अंत के साथ ही समाप्त हो जाती है। 1920 इतिहास का यह लोमहर्षक कालखंड कंवल जी ने बड़े ही संवेदना के साथ दर्ज किया है। यह गिरमिटिया साहित्य उनकी पीड़ाब्रिटिश एजेन्टों द्वारा धोखे से गिरमिटिया बनाए जाने से ले कर अनेक ,उनकी त्रासदी , लोगों की हुई मृत्यु का दस्तावेज़ है।

इस प्रकार की कई अमानवीय परिस्थितियों से मजदूरों को गुजरना पड़ा और मजदूर इसी उम्मीद में थे कि कब इस कुली प्रथा का अंत होगा और नया सवेरा आएगा। कंवल लिखते हैं-

सवेरा आएगा
यह खेत कभी तो जागेंगे
तब खून पसीना महक उठेगा
तब कुदाल और छुरियाँ ललकारेंगी
फिर धरती का आँगन चहक उठेगा।। 114 पृष्ठ ,सवेरा)- (115

इस आशावादी विचारधारा के सहारे गिरमिटियों ने अनुबन्ध के वर्षों को काटा जहाँ जहाजी भाई एक 10 से 5 सुख का हिस्सा बने।-दूसरे के दुख

निर्धारित काम या समय समाप्त होने पर मजदूर अपने बैरकों में लौट जाते थे जिसे 'कुली लैन' कहा जाता था। आम तौर पर इन कुली लैनों में रहने की स्थिति असहज, भीड़, गंदगी और बदसूरत थी। यूरोपियन लोग भारतीय मजदूरों को कुली कहकर संबोधित करते थे। यहाँ तक की सन् की जनगणना के 1881) खाते में इनको कुली श्रेणी में दर्ज किया गया और इसलिए उनके रहने की जगह को कुली लैनCoolie lines) कहा जाता था।[12] ब्रिटन सरकार द्वारा फीजी में रहने के लिए मजदूरों को कोठरियाँ मिलती थी। प्रत्येक कोठरी 12 फुट लंबी 8 फुट चौड़ी होती थी। यदि किसी पुरुष के साथ उसकी विवाहिता स्त्री हो तो उसे यह कोठरी दी जाती और नहीं तो तीन पुरुषों या तीन स्त्रियों को यह कोठरी रहने को मिलती थी। औपनिवेशिक सरकार ने यह

नियम बनाया था" -Employers of Indian labourers must provide at their own expense suitable dwellings for immigrants. The style and dimension of these buildings are fixed by regulations."[13] अर्थात् 'जो लोग भारतवासी मजदूरों को नौकर रखेंगे, उन्हें अपने खर्च से उन मजदूरों को रहने के लिए अच्छे निवासस्थान- देने होंगे। इन मकानों की बनावट, लम्बाई, ऊँचाई, चौड़ाई इत्यादि नियमों से स्थिर की जाएगी।' किंतुजिन तीन आदमियों को रहने के लिए यह कोठरी मिलती उनमें चाहे कोई हिंदू हो या , मुसलमान, अथवा चमार-तेली कोई क्यों न होसाथ रहना ही पड़ता। यदि कोई ब्राह्मण देवत इन्हें ,ा किसी चमार इत्यादि के संग आ पड़े तो फिर उनके कष्टों का क्या पूछना है। प्रायः ऐसा हुआ करता था कि ब्राह्मणों को चमारों के साथ रहना पड़ता था। इस रहनजोल के कारण भारतीय सामाजिक जाति व्यवस्था -सहन और मेल-शुरुआत कलकत्ता डीपो से हो गई थी जहाँ मज का अधःपतन हुआ जिसकीदूरों को एक जैसे कपड़े पहननेसाथ , सोने आदि के लिए ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा मजबूर किया-रहने ,पीने-खानेगया। शाम के भोजन के बाद, कई प्रवासी भारतीय थकान के कारण जल्द ही सो जाते थे और सप्ताहांत ही मनोरंजन के लिए वे वक्त निकालते थे।

उतरगिरमिट -काल

पाँच साल के अनुबंध के बाद, गिरमिटिया श्रमिकों को 'Certificate of Industrial Residence' औद्योगिक निवास का प्रमाण पत्र दिया जाता था जिसके बाद वे एक स्वतंत्र हो जाते थे। यह प्रमाण पत्र उनके लिए आजादी का और भारत लौटने का जरिया था । उन मजदूरों के लिए यह एक ऐसा दिन था जब वे एक स्वतंत्र भारतीय के रूप में चल-फिर सकते थे, और औपनिवेशिक कुली प्रथा से मुक्त थे। वे अपनी पसंद के किसी भी उद्योग में शामिल होकर नए सिरे से अपनी आजीविका का निर्माण कर सकते थे। सन् 1957 तक, लगभग 40 प्रतिशत प्रवासी भारतीय अपने वतन भारत लौट आए ,गिलियन .एल .के) 392)।

कुछ गिरमिटिया मजदूर पांच साल बाद भारत लौट गए तो वहीं कई 10 साल के बाद मुक्त मार्ग से लौटने के लिए निर्भर थे। लेकिन ज्यादातर गिरमिटियों ने स्थायी रूप से फीजी में रहने के लिए चुना। प्रोब्रिज लाल के अनुसार ., गिरमिटियों के फीजी में बने रहने के कुछ कारण थे बेहतर अवसरों की संभावना , धर्म भ्रष्ट और फिर से एक लंबी समुद्री यात्रा करने का भय था। तथा इतिहासकारों ने यह भी तर्क दिया कि उन्हें फीजी की औपनिवेशिक सरकार और ऑस्ट्रेलिया की औपनिवेशिक कोलोनियल शुगर रीफाइनिंग कंपनी)CSR) द्वारा भारत लौटने से रोका गया था क्योंकि उस समय फीजी का चीनी उद्योग पूरी तरह से इन भारतीयों के श्रम पर आश्रित थी और फीजी की अर्थव्यवस्था चीनी व्यवसाय पर निर्भर थी।

इस प्रकार गिरमिट पश्चात अधिकांश गिरमिटिया फीजी की भूमि पर बस गए और समृद्धि व प्रगति की ओर बढ़ते चले गए। वे न केवल फीजी में रुके, बल्कि उन्होंने कुली प्रथा जिसने उनसे उनकी इज्जत लूट

ली थी, एक ऐसा अभिशाप जिसने उन्हें इंसाफ से वंचित कर दिया था के विरुध मिलकर आवाज़ उठाई। तोताराम सनाढ्य की 'फिजी द्वीप में मेरे इक्कीस वर्ष' एक गिरमिटिया मजदूर के दृष्टिकोण से लिखी पहली कृति रही जिसने गिरमिट प्रथा के कष्टों को मार्मिकता से प्रस्तुत किया। तोताराम सनाढ्य एक करारबद्ध श्रमिक की हैसियत से सन् में फीजी आए थे। उ 1896नसे सालों तक बंधुआ मजदूर के रूप में काम कराया गया। इस 5 दौरान वे अपने अधिकारों के लिए निडर होकर संघर्ष करते रहे। करार की अवधि समाप्त होने पर उन्होंने एक की साथ अपना अधिकांश समय उन लोगों-छोटे किसान और पुजारी का जीवन व्यतीत किया और उसके साथ सहायता में लगायाजो बंधुआ मजदूर के रूप में वहाँ काम कर रहे थे। वे भारत की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष कर रहे भारतीय नेताओं के सम्पर्क में रहे और भारत से अधिक शिक्षक, वकील, कार्यकर्ता आदि भेजने का अनुरोध किया ताकि फीजी के भारतीय लोगों की दुर्दशा को कम किया जा सके। फीजी में 21 वर्ष रहने के बाद में 1924 वे भारत लौटे तथा फीजी में अपने अनुभवों को'फिजी द्वीप में मेरे इक्कीस वर्ष' नाम से एक पुस्तक में पं . बनारसीदास चतुर्वेदी के संपादन तले प्रकाशित किया। फीजी की करारबद्ध मजदूरों की दुर्दशा को समझने के लिए इस पुस्तक में वर्णित अनुभव बहुत सहायक सिद्ध हुए।

सन् अधिकांश मजदूर फीजी में बस गए और इसी मिट्टी के ,में गिरमिट प्रथा के पश्चात 1916 नए पारिवारिक संबंध ,होकर रह गए। फीजी में रहने के कुछ अन्य कारण रहें, अंतर्जातीय विवाह, भारत में बहिष्कृत होने का डर और पैसे बचाने के लिए थे। ऐसे अन्य लोग भी थे जो अपनी नई सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक लाभ को नहीं छोड़ना चाहते थे। गिरमिटिया मजदूरों के संबंध में बर्टन ने इस बात को भी स्वीकारा है कि भारतीय अपने बच्चों को काम करना, और कड़ी मेहनत करना सिखाते हैं। इसलिए जमीन किराए पर होने के बावजूद भी वे जीवित और पनपते रहे हैं। उन्होंने भारतीयों की प्रशंसा करते हुए यह भी कहा कि गिरमिट के अभिशाप को भारतीयों ने अपने वंशज और मानव जाति के लिए एक वरदान बना दिया है।

गिरमिटिया मजदूरों ने जैसा देश वैसा अपना भेस बनाया और फीजी के आदिवासी लोगों के साथ घुल मिल गए। आज फीजी की-9 लाख की जन आबादी में साढ़े तीन लाख से अधिक भारतीय मूल के लोग हैं। यहाँ तक की फीजी के प्रवासी भारतीयों ने पीढ़ीपीढ़ी अपनी भाषा और परंपरा को हिंदी के माध्यम से -दर-खाकायम र है। अधिकांश गिरमिटियें अपने बच्चों को सामाजिक व्यवस्था के निचले पायदान पर नहीं देखना चाहते थे तथा स्वयं उन्होंने जो गरीबी और अपमान झेला उस प्रकार का जीवन वे अपने वंशज के लिए नहीं चाहते थे। इस मनःस्थिति के साथ गिरमिटियों की भावी पीढ़ियों ने विद्यालयों में निवेश लिया और शैक्षिक उपलब्धियों पर अत्यधिक जोर दिया। वे आज सरकारी अधिकारी, उद्यमी और कुशल पेशेवर हैं। सामाजिक-आर्थिक सफलता के साथ, कई इंडोफिजियंस ने आंतरिक और बाहरी प्रवासन किया है।- हालांकि प्रवासी भारतीयों की जनसंख्या फीजी में कम हो रही है, लेकिन ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, कैनेडा और संयुक्त राज्य

अमेरिका जैसे देशों में उनकी आबादी के लिए यह नहीं कहा जा सकता है। न केवल उनकी आबादी बढ़ रही है, बल्कि इंडोफिजियन भी सामाजिक-, सांस्कृतिक और आर्थिक विकास में गहराई से लगे हुए हैं।

गिरमिट प्रथा से छूटने पर भारतीयों में आत्मसम्मान और आत्म विश्वास पुनःस्थापित हुआ। उन्होंने इस बात को स्वीकार किया कि अब फीजी ही उनका देश है। हालांकि जिस जमीन पर वे रह रहे थे वे नेटिव लैण्ड ट्रस्ट बोर्ड से पट्टे पर ली गई थी। जमीन के संबंध में ब्रिज लाल लिखते हैं -

"अपने अन्य साथियों की तरह मेरे पिता का संसार भी नेटिव लैण्ड ट्रस्ट बोर्ड द्वारा पट्टे पर ली गई दस एकड़ भूमि पर केंद्रित था। वह केवल एक पट्टा था क्योंकि हमें भूमि का स्वामित्व कभी नहीं दिया गया। अधिकांश भूमि फीजियनों के हाथों में ही रही, पर हमने यह कभी नहीं सोचा कि वह भूमि हमारी नहीं रहेगी। यह विचार कि वह एक दिन अपने स्वामियों के पास वापस चली जाएगी जैसा कि आज हो गया है ऐसा कभी हमारे दिमाग में ही नहीं आया।"[14] अतः इन भारतवंशियों और उनके वंशज ने फीजी को ही अपनी मातृभूमि का दर्जा दिया।

धीरेधीरे उन्होंने बहुजातिय समाज में अपनी पहचान बनाई तथा अपनी भाषा-, रीति-रिवाज़ों और सांस्कृतिक मूल्यों को भी संभाले रखा। तीसरी और चौथी पीढ़ी के भारतीयों नेफीजी में अपनी भाषा, अपनी संस्कृति और धर्म को सुरक्षित रखा है। फीजी में आर्य समाज, सनातन धर्म, मुसलिम लीग, कबीर पंथ सभा, सिक्ख गुरुद्वारा समिति आदि धार्मिक संस्थाएँ अपनापूर्वक कर रही हैं। दीपावली-अपना कार्य आनंद-, होली, रामनवमी, ईद इत्यादि त्योहार आज उसी तरह मनाए जाते हैं जैसे वे पचास वर्ष पहले मनाए जाते थे। अंग्रेजी शिक्षा प्रचलित होते हुए भी अधिकांश भारतीय अपने घरों में हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं। वे अपने पूर्वजों द्वारा प्राप्त संस्कृति और परंपराओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने में सक्षम रहे हैं।

सनाढ्य, बर्टन, सुब्रमनी, सतेंद्र नंदन, केए.लगिलियन ., विजय मिश्रा, सुदेश मिश्रा, अहमद अली, विजय नायडू, कंवल और ब्रिज लाल सहित कई अन्य विद्वानों ने मजदूरों की भर्ती पर बहुत कुछ लिखा है, काला पानी को पार करने की स्थिति, और कुली लाइनों का जीवन, और गिरमिट काल के बाद का जीवन। प्रमुख विषयों की खोज के आधार पर कहा जा सकता है कि भर्ती प्रक्रिया में झूठ का सहारा लिया गया, प्रवासियों के खिलाफ अपराध जैसे शारीरिक दंड, अतिभुगतान-, अनियमित भुगतान, खराब सेवाएं, यौन शोषण, असमानता और अपर्याप्त आवास काला पानी के जेल सा जीवन हमारे पूर्वजों की सहना पड़ा। इस भयानक अनुभव के परिणाम स्वरूप फीजी में कालोनियों ने आत्महत्या भी की । लेकिन गिरमिट के सभी अनुभव उदास और कष्टों से भरे नहीं थे। यदि पुराने रिश्ते डेपो में टूट गए, तो जहाजी भाई के एक नए रिश्ते ने जाति, धर्म, सामाजिक स्थिति को अनदेखा कर सभी गिरमिटियों को एक सूत्र में बांध दिए जहाँ जातिपाति की -

दीवारे नहीं थी। यदि कुली प्रथा ने प्रवासियों को पुराने तरीके छोड़ने के लिए मजबूर किया, तो दूसरी ओर उन्हें जीवन जीने का नया तरीका भी सिखाया है।

---

[1] कुमार, खमेन्द्र. "पिंजरा" . *फीजी हिंदी काव्य साहित्य.* सुभाषिनी कुमार और मुकेश मिश्र (सं), 2019, पृ. 47.

[2] चतुर्वेदी, बनारसीदास. गद्य कोश- *फिजी द्वीप में मेरे 21 वर्ष* / भाग 1 / तोताराम सनाढ्य 1972. http://www.adyakosh.org/gk/फिजीद्वीप_में_मेरे_21_वर्ष_/_भाग_1_/_तोताराम_सनाढ्य Accessed 15 सितम्बर 2023.

[3] कौर, अमरजीत. *फीजी का हिंदी काव्य साहित्य,* जोगिन्द्र सिंह कंवल (सं.), भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, 2004, पृ. 10.

[4] चतुर्वेदी, बनारसीदास. गद्य कोश- *फिजी द्वीप में मेरे 21 वर्ष* / भाग 1 / तोताराम सनाढ्य 1972. http://www.adyakosh.org/gk/फिजीद्वीप_में_मेरे_21_वर्ष_/_भाग_1_/_तोताराम_सनाढ्य Accessed 15 सितम्बर 2023.

[5] लाल, ब्रिज. वी, . *चलो जहाजी.* ऑस्ट्रलियन नेशनल युनिवर्सिटी ई प्रेस, 2012, पृ. 27.

[6] बर्टन, जय. डब्लू. *The Fiji of To-Day.* Charles H. Kelly, 1910, पृ. 75-106.

[7] गिलियन, के. एल. *A History of Indian Immigration and Settlement in Fiji.* Australian National University, 1958.

[8] कुमार, राकेश. "गिरमिट की दास्ताँ" . *शान्ति दूत.* 10 मई, 2019. पृ. 11.

[9] बनारसीदास चतुर्वेदी. 1972. गद्य कोश- फिजीद्वीप में मेरे 21 वर्ष / भाग 1 / तोताराम सनाढ्य http://www.adyakosh.org/gk/फिजीद्वीप_में_मेरे_21_वर्ष_/_भाग_1_/_तोताराम_सनाढ्य

[10] अली, अहमद. "Fiji Indians- A Historical Perspective" . *Girmit- A Centenary Anthology 1879-1979.* Ministry of Information, Fiji, 1979, पृ. 11.

[11] गिलियन, के. एल. *A History of Indian Immigration and Settlement in Fiji.* Australian National University, 1958.

[12] कंवल, जोगिन्द्र सिंह. *फीजी में हिंदी के सौ वर्ष (1879-1979).* फीजी टीचस यूनियन, फीजी, 1980, पृ. 17.

[13] बनारसीदास चतुर्वेदी. 1972. गद्य कोश- फिजीद्वीप में मेरे 21 वर्ष / भाग 1 / तोताराम सनाढ्य

[14] ब्रिज. वी. लाल. "फीजी यात्रा आधी रात से आगे" . प्रवासी संसार. (अनुवादक- सत्य श्रीवास्तव), 2016, वर्ष 11, 3. पृ. 84.

****